नक्सलवाद का उद्भव एवं विकास : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. मिथिलेश कुमार चौबे
एसोसिएट प्रोफेसर–समाजशास्त्र विभाग
गायत्री विद्यापीठ पी.जी. कालेज,
रिसिया–बहराइच, उ.प्र.

सामाजिक व्यवस्था के बनाने वालों को इतना भी अन्दाजा नहीं रहा होगा कि उनकी कुचालों से भविष्य में किस तरह की समस्या खड़ी हो सकती है। अगर नक्सलवाद से सम्बन्धित समस्याओं का गम्भीरता से अध्ययन किया जाए तो यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि आजादी के साथ देश का बंटवारा होना और आजादी के 20 साल बाद नक्सलवाद हमारी व्यवस्था की ही देन है। यह देश के लिए एक ऐसा नासूर बन गया है जो उसके अस्तित्व के लिए खतरनाक होता जा रहा है। 1967 में पश्चिम बंगाल के सिलीगुड़ी के अनाम गांव नक्सलवाड़ी से शुरू हुआ इसका सफर आज अपने लिए नित नई मंजिले तय कर रहा है।

नक्सल अथवा नक्सलवादी शब्द एक सामान्य शब्द है, जिसका प्रयोग भारत के विभिन्न भागों में अलग–अलग नामों से क्रियाशील लड़ाकू साम्यवादी समूहों के लिए किया जाता है। नक्सलवादी यह मानते हैं कि वे हिंसा के माध्यम से समाज में बदलाव ला सकते हैं। वे लोकतंत्र व लोकतांत्रिक संस्थाओं के खिलाफ रहते हैं एवं जमीनी स्तर पर लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को खत्म करने के लिए हिंसा का सहारा लेते हैं। नक्सलवादी समूह देश के अल्पविकसित क्षेत्रों में विकासात्मक कार्यों में बाधा उत्पन्न कर लोगों को सरकार के प्रति भड़काने की कोशिश करते हैं।

यह आन्दोलन नक्सलवादी से प्रारम्भ होकर देश के 29 राज्यों में से कम से कम 20 राज्यों के 223 जिलों के 2000 थाना क्षेत्रों को अपने चपेट में ले चुका है। आन्ध्र प्रदेश, झारखण्ड, बिहार, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, तमिलनाडू, महाराष्ट, उ0प्र0, पश्चिम बंगाल के लिए यह समस्या एक विकराल रूप धारण कर चुकी है। देश के लगभग छठवें भाग पर नक्सली अपना मजबूत नियंत्रण बना चुके हैं। यह धीरे–धीरे अपनी पैठ को और बढ़ा रहे हैं। सच तो यह है कि नक्सली आन्दोलन ने अब आतंकवाद की शक्ल अख्तियार कर ली है, जिसे हवा देने में पड़ोसी देशों की भूमिका भी सकारात्मक है।

पश्चिम बंगाल के गांव नक्सलवाड़ी में गरीब, आदिवासी, दलित और मजदूरों ने कम्युनिष्ट नेता चारू मजूमदार व कानू सान्याल की अगुवायी में बड़े भूस्वामियों और सत्ता के खिलाफ आन्दोलन छेड़ दिया। नक्सलवाड़ी के बाद यह आन्दोलन पश्चिम बंगाल के दूसरे इलाकों में भी फैल गया और लूटे–पिटे लोग खासकर आदिवासी और दलित इससे जुड़ते रहे। पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले में बिहारी मजदूरों की तादाद बहुत ज्यादा रहने के कारण बिहार के दलित भी ऊंची जाति के भूपतियों से जब दुखी हुए तो इसका प्रभाव बिहार में पड़ा, और इस आन्दोलन में बिहार में भी अपनी जड़े जमा लीं। बिहार में जोत की जमीन का बंटवारा भी पश्चिम बंगाल से उल्टा है। पश्चिम बंगाल में जहाँ 84 फीसदी जमीन छोटे किसानों के पास हैं, वहीं बिहार में इतनी जमीन ''भूराबाल'' यानी भूमिहार, राजपूत, बाभन, लाला यानी ऊँची

जाति वालों के पास है। इस वजह से बिहार में गरीबी–अमीरी की खाई बहुत चौड़ी है। गरीबों द्वारा उचित मजदूरी मांगने और जोर जुल्म की खिलाफत करने पर ऊंची जाति के मालिक उन्हें 'वर्ग शत्रु' और 'नक्सलवादी' कहने लगे, पुलिस व प्रशासन हमेशा ऊंची जाति वालों के मदद्गार रहे। किसी गांव में कोई वारदात होने पर पुलिस गरीबों को 'नक्सली' कहकर गोलियों से भून डालती और इन हत्याओं को मुठभेड़ का नाम दे दिया जाता। अगर बिहार में गरीब और दलितों के साथ इंसानी बर्ताव किया जाता, तो नक्सलवाद बिहार में नहीं पनपता, फिर बिहार के रास्ते छत्तीसगढ़, आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा, कर्नाटक व महाराष्ट्र में भी इस आन्दोलन की आग न लगती। इन राज्यों में भी नक्सलियों का जोर उन इलाकों में ज्यादा है, जो आदिवासी और दलित बहुल हैं, और जहाँ बहुत गरीबी है। बिहार से आन्दोलन छत्तीगढ़ के बस्तर में पहुँचा। आज की स्थिति यह है कि छत्तीसगढ़ के आधे से अधिक इलाके में नक्सली अपनी पैठ बना चुके हैं। सूबे में लाल आतंक का साया है इसके खौफ में लोगों से उसका अमन चैन छीन लिया है। खास तौर उन आदिवासियों का जिन्हें इन जंगल से इस तरह का लगाव है कि वे कहीं जा ही नहीं सकते। उनके लिए स्थिति कुछ ऐसी है कि जंगल छोड़ दें तो मर जाएं न छोड़े तो भी मरें। छत्तीसगढ़ के कई जिलों में नक्सलियों ने आम लोगों को निशाना बनाकर हालात बद् से बद्तर कर दिया है। स्थिति यह है कि पुलिस और प्रशासन की नींद भी हराम हो गयी। बस्तर में तो कई पुलिस वालों ने यह स्वीकार किया कि जो संसाधन उन्हें नक्सलियों से लोहा लेने के लिए मिलते हैं उनके भरोसे रहे तो वे बेरहम मौत मारे जायेंगे। आम जनों की यह धारणा है कि अगर फोर्स का साथ दिया तो नक्सली दुश्मन और यदि नक्सलियों का साथ दिया तो पुलिस उनकी दुश्मन हो जाती है। यह घुटन भरी जिन्दगी जीने को मजबूर हैं, सूबे के भोले–भाले आदिवासी। छत्तीसगढ़ के नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में जवानों का मनोबल बढ़ाने के लिए वरिष्ठ अधिकारी आये दिन थानों का हवाई मार्ग से दौरा करते हैं। थानों में जवानों के मध्य ऐसा माहौल निर्मित करने की कोशिश करते हैं कि जवान और अवसाद या अकेलापन महसूस न कर सके। जो हालात बिहार, झारखण्ड और छत्तीसगढ़ की है वही हालात आदिवासी बहुल आन्ध्र प्रदेश उड़ीसा कर्नाटक व महाराष्ट की है। उड़ीसा जंगलात की जमीनों के पट्टे दलितों (आदिवासी दलित) को न देकर खनिज माफिया, भूमाफिया व उद्योगपतियों को आवंटित किये जाने के कारण दलित आदिवासियों के दिलों में जलालत, जोर जुल्म, सामाजिक व माली असामान्ता की आग धधक रही है, नक्सलवाद इसी आग का लावा है। आन्ध्र प्रदेश के वारंगल, करीम नगर, कड़प्पा, आदिलाबाद में नक्सलियों की अपनी सरकार चलती रही है। इनके अपने नियम व कानून रहे हैं। यह बड़े–बड़े ठेकेदारों से लेवी वसूलते हैं इस प्रकार आन्ध्र प्रदेश भी नक्सलियों के उत्पात से कम प्रभावित नहीं है। नक्सली आन्दोलन और नक्सलवाद से उ0प्र0 भी अछूता नहीं है। उ0प्र0 का मिर्जापुर, सोनभद्र और चन्दौली जिला नक्सलियों की गिरफ्त में रहता है। इन जिलों के नक्सली प्रभावी होने का बड़ा कारण इनकी सीमा बिहार के पलामू जिले से लगना है। जब चन्दौली जिले की सीमा बिहार के भभुआ और रोहतास जिलों से सटी हुई है। सोनभद्र चन्दौली और मिर्जापुर में नक्सलियों ने खराबात, चेरों, अंगरिया, भांगर, कोल, दलित गोड़ जाति और आदिवासियों की विभिन्न कमेटियों और पार्टियों के माध्यम से अपना आधार मजबूत किया है। इन्हें लेकर क्रान्ति किसान कमेटी, क्रांन्तिकारी सांस्कृतिक संघ, नारी मुक्ति संघ, कम्युनिष्ट युवा लीग, किसान आन्दोलन मंच, मजदूर मुक्ति संघ, क्रान्तिकारी छात्र लीग, बुद्धिजीवी संघ के नाम

से चल रहे संगठन नक्सली आन्दोलन के विस्तार के रूप में इस्तेमाल होते रहे हैं। नक्सली आन्दोलनों का विस्तार जिन इलाकों में है वे बेहद गरीब इलाकों की श्रेणी में आते हैं। वहाँ विकास ज्यादा नहीं हुआ है। इन इलाकों की सामाजिक, आर्थिक स्थितियाँ नक्सलवाद के फलने फूलने में सहायक बनी हुई हैं। इन तीनों जिलों में फैले नक्सलवादी आन्दोलन से निपटने के लिए केन्द्र सरकार ने कई पैकेज दिये हैं और करोड़ों रूपये मुहैय्या कराये हैं। कारण यह हुआ है कि कम से कम उ0प्र0 में तो नक्सलियों पर नकेल कसने में कामयाबी मिली है। नक्सलवाद का ग्राफ काफी नीचे आ चुका है।

''भारत में नक्सली समस्या के पनपने की पैसे तो अनके वजहें हैं किन्तु इनमें से मुख्य वजहें हैं सामाजिक न्याय व समानता की कमी, समस्याओं की सरकारी स्तर पर उपेक्षा तथा हकों पर डांका''। नक्सवाद से जुड़ा एक तल्ख सच यह है कि आदिवासी क्षेत्रों में ही अधिक पनपा। दरअसल यह आदिवासी बहुल विशाल भूक्षेत्र भारी पैमाने पर खनिज सम्पदाओं से भरा हुआ होता है। निहायत पिछड़ी हुई स्थितियों में यह लोग वन सम्पदा के प्राकृतिक व पारम्परिक उपयोग पर जीवित रहते हैं। लम्बे इतिहास में इन समुदायों ने अपने अस्तित्व की रक्षा और सांस्कृतिक स्तर पर अपनी पहचान को बनाये रखने की अनगिनत लड़ाईयाँ लड़ी है। नक्सलवाद इसी का परिणाम है।

नक्सली हिंसा का दमन पुलिस और सुरक्षाबलों के जरिये नहीं किया जा सकता, इस मर्ज की एक ही दवा है, और वह है– ऐसा विकास जिसमें आदिवासियों, पिछड़ों और वंचितों की समुचित भागीदारी सुनिश्चित हो और इन्हें यह कहीं से न लगे कि इनके हकों पर डाका डाला जा रहा है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि नक्सलवाद और विकास की कहानी बड़ी विचित्र है, और यदि इस समस्या के समाधान के सन्दर्भ में बेहतर उपाय नहीं किये गये तो यह देश के लिए और भी दुष्कर परिणाम उत्पन्न करेगा। रोटी, कपड़ा, मकान, स्वास्थ्य, शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता एवं सम्पूर्ण न्याय प्रत्येक मानव का अधिकार है और इसे सब को उपलब्ध कराकर ही किसी देश में अमन चैन की व्यवस्था की जा सकती है। जिस दिन से दलितों से अलगाव दूर हो जायेगा, सामाजिक व माली असामानता मिट जायेगी, आदिवासी, दलित और दूसरे बेरोजगार नौजवानों को टिकाऊ रोजगार मिल जायेगा उनकी बुनियादी जरूरतें पूरी हो जायेंगी और आदिवासी पट्टी की तरक्की होगी, उस दिन उनके दिलों में जल रही गुस्से की आग बुझ जायेगी और उस दिन नक्सलवादी आन्दोलन अपने आप डंडा पड़ जायेगा।

सन्दर्भ ग्रंथ–

(1) बिहार एक परिचय – विश्वेश्वर दास, राकेश बहादुर सिंह, विजय कुमार मिश्र
(2) राजनीति विज्ञान– डॉ0 वी0 एल0 फड़िया
(3) मानव विज्ञान विमर्श – डॉ0 रामबली मिश्र
(4) भारत में नक्सलवाद और माओवाद– एस0 नारायण
(5) भारत में नक्सली आन्दोलन– प्रकाश सिंह